टिप्पणी

17
वित्तीय प्रबन्ध

आप यह भलीभाँति जानते हैं कि प्रत्येक व्यावसायिक उपक्रम को, चाहे वह औद्योगिक हो या व्यापारिक अथवा निर्माण कम्पनी, अपने व्यावसायिक क्रिया–कलापों के सफलतापूर्वक संचालन हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। स्थाई सम्पत्ति जैसे मशीन, उपकरण, फर्नीचर आदि को प्राप्त करने, कच्चे माल या निर्मित माल को क्रय करने, लेनदारों को भुगतान करने और दैनिक व्ययों के भुगतान हेतु एक व्यावसायिक इकाई को वित्तीय कोष की आवश्यकता होती है। वास्तव में पर्याप्त वित्त की उपलब्धता व्यवसाय की सफलता का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। यद्यपि आज के युग में वित्त की आवश्यकता इतनी अधिक है कि कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत स्रोत से इस आवश्यकता को पूर्ण करने में असमर्थ है। अतः व्यवसायी को अपनी वित्त की आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु दूसरे स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। एक व्यवसायी वित्तीय कोष को जुटाने के लिए बहुत–सी विधियाँ अपनाता है। इसके पूर्व के अध्याय में आप वित्तीय कोषों को जुटाने के स्रोतों एवं विधियों का अध्ययन कर चुके हैं। आप भली–भाँति जानते हैं कि वित्त एकत्रित करने में प्रचुर मात्रा में समय व लागत की आवश्यकता होती है। इसकी भी अपनी लागत है। अतः प्रत्येक व्यवसायी को फर्म के लिए आवश्यक कोष की अनुमानित राशि का निर्णय करने, उसे प्राप्त करने के रूपों तथा प्रयोग किए जाने के सम्बन्ध में बहुत सावधानी से कार्य करना चाहिए। इस अध्याय में आप फर्म की वित्तीय आवश्यकताओं का अनुमान लगाने की विधि और वित्त के प्रारूप को निश्चित करने के सम्बन्ध में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- वित्तीय प्रबन्ध के उद्देश्य बता सकेंगे;

टिप्पणी

- विभिन्न प्रकार के वित्तीय निर्णयों का अर्थ समझा सकेंगे;
- वित्तीय नियोजन का अर्थ एवं उद्देश्यों का उल्लेख कर सकेंगे;
- स्थाई एवं कार्यशील पूँजी की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे;
- स्थाई व कार्यशील पूँजी के निर्धारक तत्त्वों की पहचान कर सकेंगे;
- पूँजी संरचना के अर्थ एवं महत्त्व को समझा सकेंगे;
- पूँजी संरचना के निर्धारक तत्त्वों की पहचान कर सकेंगे; एवं
- लाभांश का अर्थ एवं उसका निर्धारण करने वाले कारकों की व्याख्या कर सकेंगे।

17.1 वित्तीय प्रबन्ध के उद्देश्य

वित्तीय प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य अंशधारियों के धन को अधिकतम करना है। वित्तीय प्रबन्ध के अन्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. स्वामी को उनके विनियोग पर अधिकतम प्रत्याय देना।
2. लगातार उचित लागत पर पर्याप्त कोष को सतत् रुप से उपलब्ध कराना।
3. कोषों का प्रभावशाली उपयोग करना।
4. कोषों की सुरक्षा करना।
5. इस बात का पता लगाना कि विनियोजित पूँजी की लागत से अधिक का अर्जन हो रहा है या नहीं।

विनियोग, वित्त एवं लाभांश के सम्बन्ध में निर्णय

1. **विनियोग निर्णय :** यह निर्णय सतर्कतापूर्वक उन सम्पत्तियों का चयन करता है, जिसमें संस्था के कोषों का विनियोजन करना है। निर्णयन, जिसके द्वारा स्थायी सम्पत्तियों में विनियोग होना है तथा निर्णयन, जिसके द्वारा चालू सम्पत्तियों में विनियोग होना है, इसका ध्यान यहाँ रखना है।

   विनियोग सम्बन्धी निर्णय रोकड़ प्रवाह, जोखिम एवं तकनीकी परिवर्तन आदि से सम्बन्धित होता है।

2. **वित्तीय निर्णयन :** यह निर्णय उस अनुपात से सम्बन्धित है, जिसके द्वारा कोष विभिन्न साधनों से एकत्रित किए जाते हैं। घटक जैसे कोष की लागत, जोखिम, रोकड़ प्रवाह आदि को वित्तीय निर्णयन से पूर्व देखा जाता है। वित्तीय निर्णयन में कम्पनी को स्वामी पूँजी एवं ऋण पूँजी का अनुपात ज्ञात करना होता है। स्वामी पूँजी में समता अंश पूँजी, पूर्वाधिकारी अंश पूँजी एवं प्रतिधारित आय सम्मिलित होती है। ऋण पूँजी में ऋण पत्र, ऋण एवं सार्वजनिक जमा आदि सम्मिलित हैं।

3. **लाभांश निर्णयन :** यह निर्णयन लाभों के विनियोग से सम्बन्धित है। कम्पनी का लाभ या तो कम्पनी में भविष्य के लिए रोका जाता है अथवा अंशधारियों में लाभांश के रुप में बांट दिया जाता है। कम्पनी को यह निश्चित करना होता है कि लाभ का कितना भाग लाभांश के रुप में बाँटा जाए तथा कितना भाग कम्पनी के विकास के लिए रोका जाए। लाभांश सम्बन्धी निर्णय लेने में रोकड़ प्रवाह की स्थिति, अर्जन की स्थिरता, विकास की सम्भावनाएं आदि को ध्यान में रखा जाता है।

पाठगत प्रश्न 17.1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. एक कम्पनी एक पुरानी मशीन के बदले नई मशीन क्रय करने पर विचार कर रही है। इस में निम्न में से कौन सा निर्णय संलिप्त है?

   अ) विनियोग निर्णयन ब) वित्तीय निर्णयन

   स) लाभांश निर्णयन द) उपर्युक्त सभी

2. एक कम्पनी अपने लाभ का कुछ भाग अंशधारियों को देना चाहती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित में से कौन सा निर्णय संलिप्त है?

   अ) वित्तीय निर्णयन ब) विनियोग निर्णयन

   स) लाभांश निर्णयन द) उपर्युक्त सभी

13. एक कम्पनी अपने विस्तार कार्यक्रम के लिए निधि की आवश्यकता का अनुमान लगाना चाहती है। इसमें कम्पनी का कौन सा निर्णय संलिप्त है?

   अ) वित्तीय निर्णयन ब) विनियोग निर्णयन

   स) लाभांश निर्णयन द) उपर्युक्त सभी

17.2 वित्तीय नियोजन

आप जानते हैं कि नियोजन किसी कार्य को उद्देश्यपूर्ण ढंग से करने के सम्बन्ध में निर्णय लेने की एक सुव्यवस्थित विधि है। जब इस विधि का प्रयोग केवल वित्तीय कार्यों के लिए किया जाता है तो उसे वित्तीय नियोजन कहते हैं। किसी व्यावसायिक उपक्रम के सम्बन्ध में वित्तीय नियोजन का सम्बन्ध किसी फर्म की वित्तीय आवश्यकताओं का अनुमान लगाने और वित्तीयन के स्वरूप का निर्णय करने से होता है। इसमें वित्तीय प्रक्रिया से सम्बन्धित निर्धारक उद्देश्यों, नीतियों, कार्यविधि और कार्यक्रमों को भी शामिल किया जाता है।

अतः वित्तीय नियोजन में निम्नलिखित सम्मिलित हैं :

(क) एकत्रित की जाने वाली पूँजी की मात्रा का अनुमान लगाना;

(ख) वित्तीय स्वरूप का निर्धारण अर्थात एकत्रित की जानेवाली पूँजी के स्वरूप एवं अनुपात का निर्धारण करना है;

(ग) कोष की प्राप्ति, आबंटन एवं प्रभावशाली प्रयोग के सम्बन्ध में वित्तीय नीति का निर्धारण करना।

यह ज्ञात कर लेने के पश्चात् कि वित्तीय नियोजन क्या है, अब हम इसके उद्देश्यों का अध्ययन करेंगे।

17.2.1 वित्तीय नियोजन के उद्देश्य

वित्तीय नियोजन के मुख्य उद्देश्य हैं—

(क) एक निश्चित अवधि के लिए स्थाई पूँजी व कार्यशील पूँजी की मात्रा का निर्धारण करना;

(ख) एक न्यायोचित ऋण—समता मिश्रण का प्रयोग करते हुए यह निर्णय करना कि विभिन्न स्रोतों से कितना धन एकत्रित किया जाए;

(ग) यह सुनिश्चित करना कि वांछित धन की पूर्ति समय पर और न्यूनतम लागत पर हो जायेगी;

(घ) पर्याप्त नकद धन होने को सुनिश्चित करना ताकि वांछित भुगतान करने में कोई त्रुटि न हो और बिना किसी कठिनाई के आकस्मिक खर्चों का (यदि कोई हो) भुगतान हो सके; तथा

(ङ) इस बात को सुनिश्चित करना कि कोष का अधिकतम प्रयोग इस प्रकार हो कि किसी भी समय पर न तो व्यवसाय में धन की कमी हो और नहीं दृष्टिगोचर हो।

17.2.2 एक अच्छे वित्तीय नियोजन के आवश्यक तत्त्व

एक व्यावसायिक उपक्रम के लिए वित्तीय योजना प्रस्तुत करते समय निम्नलिखित पहलुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि प्रस्तुत की गई योजना व्यावसायिक संगठन के उद्देश्यों को पूर्ण करने में सफल हो।

(क) **योजना सरल होनी चाहिए :** आजकल बाजार में विविध प्रकार की बहुत—सी प्रतिभूतियाँ हैं जिन्हें निर्गमित कर के पूँजी प्राप्त की जा सकती है। किंतु पूँजी प्राप्त करने हेतु मुख्य रूप से समता अंश और साधारण स्थाई ब्याज ऋणपत्र ही श्रेयस्कर हैं।

टिप्पणी

(ख) **योजना में दूरदर्शिता होनी चाहिए :** एक फर्म की आवश्यक पूँजी का आकलन एवं उसको एकत्रित करते समय एक दीर्घकालीन दृष्टिकोण का होना आवश्यक है। हमें इस बात को सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रस्तुत की गई योजना व्यवसाय की दीर्घकालीन पूँजी की आवश्यकता को पूर्ण करने में समर्थ हो और वर्ष दर वर्ष पूँजी की आवश्यकता में होने वाले परिवर्तन को ध्यान में रखें।

(ग) **यह लचीली होनी चाहिए :** जबकि वित्तीय नियोजन दीर्घकालीन दृष्टिकोण पर आधारित है फिर भी भविष्य में होने वाली संभावित घटनाओं का उचित तरीके से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। यही नहीं बल्कि विभिन्न वित्तीय कारणों से भी फर्म विस्तारण की योजना में परिवर्तन कर सकती है। अतः यह बहुत आवश्यक है कि वित्तीय योजनाएँ बिना किसी बिलंब या कठिनाई के परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार पूँजी की आवश्यकता को समायोजित एवं संशोधित करने में समर्थ हों।

(घ) **यह सुनिश्चित करे कि वित्त कोष का अनुकूलतम प्रयोग हो रहा है :** योजना ऐसी होनी चाहिए कि वित्तीय कोषों को संतुलित मात्रा में एकत्र किया जा सके। जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है कि व्यवसाय में वित्त कोष की न तो अत्यधिक कमी होनी चाहिए और न आवश्यकता से अधिक उपलब्धता होनी चाहिए। कोष की मात्रा अनिवार्य रूप से आवश्यकता पर आधारित होनी चाहिए और कोष के एक–एक रुपए का प्रयोग प्रभावी ढंग से होना चाहिए। वित्त कोष का कोई भी भाग बिना उपयोग के नहीं रहना चाहिए।

(ङ) **कोष एकत्रित करने की लागत को पूर्ण रूप से ध्यान में रखना चाहिए और उसे यथा सम्भव न्यूनतम स्तर पर बनाये रखना चाहिए :** इस बात को सुनिश्चित करना चाहिए कि एकत्रित कोष की लागत सामान्य है। योजना द्वारा ऋण एवं समता के ऐसे वित्तीय मिश्रण की व्यवस्था होनी चाहिए जो पूँजी की लागत के दृष्टिकोण से अधिक मितव्ययी हो, अन्यथा अंशधारियों के कोष की आय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

(च) **उपयुक्त तरलता सुनिश्चित होनी चाहिए :** तरलता से तात्पर्य किसी फर्म की उस आर्थिक स्थिति से है कि जब कभी उसे नकद कोष की आवश्यकता हो तब वह उसे शीघ्र उपलब्ध हो जाये। यह इसलिए आवश्यक है कि जिससे फर्म के प्रबंधन को लज्जाजनक स्थिति से बचाया जा सके और निवेशकर्ताओं के मन में फर्म की ख्याति की कमी का अनुभव न हो। दूसरे शब्दों में, फर्म के कोष का विनियोजन इस प्रकार से हो कि आवश्यकता पड़ने पर इसकी कुछ मात्रा को नकदी में परिवर्तित कर के संभावित आर्थिक समस्या से निपटा जा सके।

टिप्पणी

वित्तीय नियोजन का महत्व

1. यह वित्त की आवश्यकता का पता लगाने में सहायता करता है।
2. इसके द्वारा अंशधारियों को अधिकतम प्रत्याय देने हेतु सुदृढ़ पूँजी संरचना का प्रयास किया जाता है।
3. निधि के उचित प्रयोग में यह सहायता करता है।
4. यह निधि की कमी एवं निधि की अधिकता को दूर करने का प्रयास करता है।
5. यह एक उपक्रम के विभिन्न विभागों में समन्वय को स्थापित करने की नीतियों एवं श्रेष्ठ विधियों को प्रदान करता है।
6. एक संगठन की वित्तीय क्रियाओं पर नियंत्रण करने से सम्बन्धित कार्य करता है।
7. यह व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का पता लगाने में मदद करता है।

पाठगत प्रश्न 17.2

1. अपने स्वयं के शब्दों में वित्तीय नियोजन की परिभाषा दीजिए।
2. निम्नलिखित में से कौन वित्तीय नियोजन के मुख्य लक्षण नहीं हैं?

   (क) सरलता,

   (ख) तरलता,

   (ग) कोष की पर्याप्त उपलब्धता,

   (घ) लोचपूर्णता

   (ङ) केवल दीर्घकालीन आवश्यकताओं पर ही केंद्रित होना

   (च) मितव्ययता
3. 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर देकर बताएं कि क्या निम्नलिखित वित्तीय नियोजन के उद्देश्य हैं?

   (क) स्थाई व कार्यशील पूँजी की आवश्यकता का निर्धारण। ( )

   (ख) विक्रय की मात्रा का निर्धारण। ( )

   (ग) कोष के समय पर उपलब्धता की सुनिश्चितता। ( )

   (घ) उत्पादन की मात्रा का निर्धारण। ( )

   (ङ) न्यूनतम संभावित लागत पर कोष को एकत्रित करना। ( )

टिप्पणी

17.3 पूँजी की आवश्यकता के प्रकार

किसी व्यावसायिक उपक्रम की पूँजी की आवश्यकता को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :

(क) स्थाई पूँजी की आवश्यकता; एवं (ख) कार्यशील पूँजी की आवश्यकता,

किसी व्यावसायिक उपक्रम की पूँजी की आवश्यकता की मात्रा को निर्धारण करने हेतु हमें उसकी स्थाई व कार्यशील पूँजी की वास्तविक प्रकृति का अध्ययन कर लेना चाहिए और साथ ही ऐसे विभिन्न कारकों को भी ध्यान में रखना चाहिए जो इस प्रकार की आवश्यकता को प्रभावित करते हैं।

17.3.1 स्थाई पूँजी

स्थाई पूँजी के अंतर्गत उस पूँजी की आवश्यकता को सम्मिलित किया जाता है जो व्यवसाय की स्थाई व दीर्घ कालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक हैं। मुख्य रूप से इसका प्रयोग स्थाई सम्पत्ति जैसे–भूमि व भवन, प्लांट व मशीन, कार्यालय उपकरण, फर्नीचर व फिक्सचर, आदि को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। स्थाई पूँजी की आवश्यकता न केवल नए उपक्रम की स्थापित करने के लिए बल्कि चालू उपक्रम के विस्तारण के लिए भी होती है। व्यवसाय के लिए इस प्रकार की आवश्यकता की राशि का निर्धारण आवश्यक स्थाई संपत्ति की सूची बनाकर एवं बाजार से उनकी कीमत की जानकारी प्राप्त कर के किया जाता है।

यहाँ ध्यान देने की बात है कि स्थाई संपत्ति में निवेश, भुगतान की एक दीर्घकालीन बचनबद्धता है। साथ ही स्थाई संपत्ति में निवेश किए धन को शीघ्र निकाला नहीं जा सकता। अतः इस प्रकार की आवश्यकता के लिए धन या तो स्वामित्व पूँजी या अंश एवं ऋणपत्रों के निर्गमन तथा वित्तीय संस्थानों से दीर्घ अवधि ऋण लेकर पूरा किया जा सकता है।

17.3.2 स्थाई पूँजी की आवश्यकता की मात्रा को निर्धारित करने वाले कारक

किसी व्यावसायिक उपक्रम की स्थाई पूँजी की आवश्यकता के आकलन हेतु हमें इस आवश्यकता को प्रभावित करने वाले कारकों की जानकारी पूर्ण रूप से होनी चाहिए। वे कारक निम्न हैं :

(क) **व्यवसाय की प्रकृति :** व्यवसाय के लिए स्थाई पूँजी की आवश्यकता का निर्धारण करने में सर्वप्रथम उस व्यवसाय की प्रकृति का ज्ञान होना चाहिए जिसमें वह फर्म काम कर रही है। इस प्रकार की पूँजी की आवश्यकता औद्योगिक उपक्रमों, जहाजी कम्पनियों एवं सार्वजनिक उपयोग के उपक्रमों के लिए बहुत अधिक मात्रा में होती है, जिनमें प्लांट एवं मशीनों पर भारी निवेश की आवश्यकता होती है। व्यापारिक इकाइयों अर्थात थोक व्यापारी एवं फुटकर व्यापारियों को स्थाई संपत्ति में केवल थोड़ी रकम का निवेश करना पड़ता है।

(ख) **उत्पाद के प्रकार :** स्थाई पूँजी की मात्रा का निर्धारण न केवल व्यवसाय की प्रकृति द्वारा होता है बल्कि उत्पाद के प्रकार को भी सम्मिलित करना आवश्यक है। एक फर्म जो केवल साबुन, टूथपेस्ट, स्टेशनरी, आदि साधारण वस्तुओं का उत्पादन करती है उसे लोहा, सीमेंट और आटोमोबाइलस का उत्पादन करने वाली इकाइयों की अपेक्षा कम पूँजी की आवश्यकता पड़ती है

(ग) **व्यवसाय का आकार :** एक फर्म जो बड़े पैमाने पर उत्पादन करती है उसे स्थाई पूँजी में प्रचुर मात्रा में निवेश करना पड़ता है क्योंकि इसमें वृहत् उत्पादन क्षमता की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार ऐसी फर्म की स्थाई पूँजी की आवश्यकता अधिक होती है, अपेक्षाकृत उन फर्मों से जो छोटी मात्रा में उत्पादन करती हैं।

(घ) **उत्पादन की प्रक्रिया :** वे फर्में जो स्वचालित मशीनों से उत्पादन करती हैं, उन्हें अधिक मात्रा में स्थाई पूँजी की आवश्यकता होती है, अपेक्षाकृत उन फर्मों के जो अर्ध–स्वचालित मशीनों अथवा शारीरिक श्रम द्वारा वस्तुओं का उत्पादन करती हैं। इसी प्रकार यदि एक फर्म उत्पादन के अधिकतर अवयवों को बाजार से क्रय करने का निश्चय करती है तो इसकी स्थायी पूँजी की आवश्यकता कम होगी अपेक्षाकृत उन फर्मों के जो स्वयं सभी अवयवों (Components) को बनाती हैं। यह उन मोटरकार बनाने वाले और मशीन बनाने वाले उपक्रमों पर चरितार्थ होता है जो संयोजन इकाई (Assembling Unit) का कार्य करते हैं।

(ङ) **स्थाई संपत्ति प्राप्त करने की विधि :** स्थाई संपत्ति जैसे मशीन व उपकरण आदि को नकद या किश्तों पर अथवा पट्टे पर प्राप्त किया जा सकता है। वह फर्म जो इस प्रकार की संपत्ति को नकद क्रय करती है, उसे अधिक धन की आवश्यकता होती है, अपेक्षाकृत उन फर्मों के जो किश्त अथवा पट्टे पर क्रय करने का निश्चय करती हैं।

17.3.3 कार्यशील पूँजी

कार्यशील पूँजी के अन्तर्गत वह रकम आती है जो चालू सम्पत्ति जैसे देनदार, व्यापार में रहतिया और दिन–प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु नकद धन के रूप में निवेशित होती है। दिन–प्रतिदिन के व्यय हैं–कार्यरत कर्मचारियों की मजदूरी, वेतन व लेनदारों को भुगतान, आदि। इसे **चक्रीय पूँजी** भी कहते हैं क्योंकि इस मद में निवेशित अधिकांश रकम देनदारों से अथवा नकद

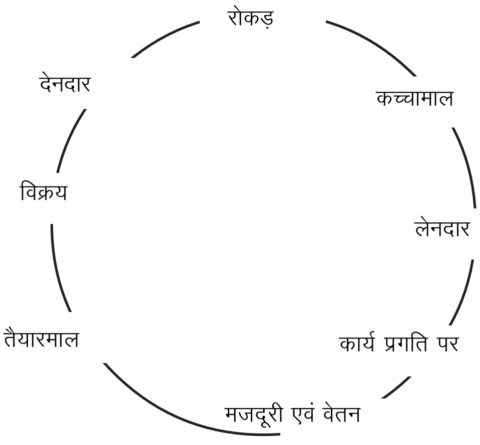

कार्यशील पूँजी चक्र

बिक्री से प्राप्त की जाती है एवं पुनः इस धन को चालू सम्पत्ति में विनियोजित कर दिया जाता है। यह नकद से चालू सम्पत्ति की ओर और चालू सम्पत्ति से नकद की ओर घूमती रहती है जैसा कि कार्यशील पूँजी चक्र में दिखाया गया है।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि कार्यशील पूँजी का एक भाग स्थाई प्रकृति का होता है क्योंकि व्यापार के आकार के अनुसार इसे कुछ निश्चित मात्रा में नकदी, देनदार व व्यापारिक रहतिया के रूप में फर्म द्वारा रखा जाता है। कार्यशील पूँजी का यह भाग **स्थाई कार्यशील पूँजी** कहलाता है। इसके लिए दीर्घकालीन स्रोतों द्वारा वित्त की व्यवस्था करनी पड़ती है। कार्यशील पूँजी के बचे हुए भाग की आवश्यकता समय–समय पर व्यवसाय के परिमाण में परिवर्तन के साथ, परिवर्तित होती रहती है। अतः इसे **अस्थिर अथवा परिवर्तनशील कार्यशील पूँजी** कहते हैं। कार्यशील पूँजी का यह भाग सामान्यतया अल्पकालीन स्रोतों जैसे कि बैंक अधिविकर्ष, व्यापारिक लेनदार, देय–विपत्र, आदि के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

17.3.4 कार्यशील पूँजी की मात्रा को निर्धारित करने वाले कारक

किसी व्यवसाय के सतत रूप में एवं कुशलतापूर्वक संचालन के लिए और तरलता बनाये रखने हेतु, पर्याप्त मात्रा में कार्यशील पूँजी का होना बहुत आवश्यक है। लेकिन आवश्यक कार्यशील पूँजी की आवश्यकता एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय एवं एक समय से दूसरे समय के लिए भिन्न–भिन्न हुआ करती है। विभिन्न कारक जो कार्यशील पूँजी की मात्रा को प्रभावित करते हैं वे निम्न हैं–

(क) **व्यवसाय की प्रकृति :** उत्पादक कम्पनियों की कार्यशील पूँजी की आवश्यकता बहुत अधिक होती है क्योंकि उन्हें बहुत बड़ी मात्रा में माल के स्टॉक की आवश्यकता होती है और उधार विक्रय अधिक होने के कारण इनके देनदार भी बहुत अधिक होते हैं। इसके विपरीत सार्वजनिक हित की इकाईयां जैसे बिजली, टेलीफोन, होटल व रेस्टोरेंट आदि थोड़ी कार्यशील पूँजी से कार्य चला सकती हैं, क्योंकि उनके अधिकांश लेन–देन नकद होते हैं और व्यवसाय चलाने के लिए रहतिया की आवश्यकता भी कम होती है।

(ख) **व्यवसाय का आकार :** प्रत्येक फर्म की कार्यशील पूँजी की मात्रा के निर्धारण में व्यवसाय का आकार महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। स्पष्टतया जितना बड़ा व्यवसाय का आकार होगा उतनी ही बड़ी मात्रा में कार्यशील पूँजी की भी आवश्यकता पड़ेगी। क्योंकि व्यवसाय का आकार बड़े होने के साथ फर्म के व्यावसायिक वस्तु सूची रहतिया (Inventory) भी अधिक होंगे और साथ ही उनके देनदार भी अधिक होंगे।

टिप्पणी

(ग) उत्पादन चक्र की समयावधि : उत्पादन चक्र की समयावधि से तात्पर्य उस समय से है जो कच्चे माल से निर्मित माल बनाने में लगता है। कच्चे माल से निर्मित माल बनाने की अवधि जितनी लम्बी होती है उतनी ही अधिक कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत कम समय लगने वाले उत्पाद में कम कार्यशील पूँजी वांछित होती है। उत्पादन चक्र की समयावधि उत्पादित वस्तु के प्रकार और उत्पादन प्रक्रिया में प्रयुक्त प्रौद्योगिकी पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, कारें और कपड़ा उद्योग में उत्पादन चक्र की समयावधि अधिक होगी, अपेक्षाकृत स्टेशनरी व कपड़ा धोने वाले पाउडर के। अतः कार कम्पनी व कपड़ा निर्माण करने वाली कम्पनी को कार्यशील पूँजी की बहुत आवश्यकता होती है। इसी प्रकार वे फर्म जो उत्पादन के नवीन एवं समुन्नत तकनीक को अपनाती हैं उनका उत्पादन–चक्र छोटा होता है और उन्हें कम मात्रा में कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होती है।

(घ) इन्वेन्ट्री आवर्त दर : निर्मित माल की आवर्त की दर से तात्पर्य उस गति से अथवा समयावधि से है जिसके अन्दर तैयार माल की बिक्री की जाती है। इन्वेन्ट्री की विक्रयावधि की दर और आवश्यक कार्यशील पूँजी की मात्रा के बीच बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक फर्म जिसकी इन्वेन्ट्री की विक्रयावधि की दर तीव्र है, उसे कम मात्रा में कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होती है, अपेक्षाकृत उस फर्म के जिसके इन्वेन्ट्री की विक्रयावधि की दर धीमी है। यह इसलिए भी है कि जिस फर्म की विक्रयावधि की दर तीव्र है वह स्टॉक में कम विनियोजन से भी काम चला सकती है। आप शीघ्रता से बिकने वाले माल के फुटकर विक्रेता जैसे पंसारी के व्यवसाय और सौन्दर्य प्रसाधन के व्यवसाय को लें, इनका माल कम समय में अधिक मात्रा में बिकता है। अतः इनके माल के स्टॉक में विनियोजन अनिवार्य रूप से कम करना पड़ता है अपेक्षाकृत उस फुटकर व्यवसाय के जिसमें विक्रय में समय लगता है जैसे कि निर्मित वस्त्र या इलेक्ट्रॉनिक माल के क्रय–विक्रय।

(ङ) साख नीति : जो फर्म अपने ग्राहकों के साथ उदार साख नीति अपनाती है, उसे अधिक मात्रा में कार्यशील पूँजी की आवश्यकता पड़ती है, अपेक्षाकृत उस फर्म के जो साख प्रदान करने की शर्त सख्त एवं उधारी की वसूली में सख्त होती है। यह इसलिए कि जब ग्राहक अधिक समय के लिए उधार पर माल क्रय करता है तो एक बड़ी मात्रा में फर्म का वित्तीय कोष देनदारों के पास फँसा रहता है। अतः इस अवस्था में अपेक्षाकृत अधिक कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होती है। लेकिन यदि इस प्रकार की फर्म माल के आपूर्तिकर्ताओं से भी उदार साख सुविधा प्राप्त करती है तो वह कम मात्रा की कार्यशील पूँजी से भी काम चला सकती है। किन्तु सभी अवस्थाओं में यह सत्य नहीं हो सकता।

(च) मौसमी उतार-चढ़ाव : वे फर्म जो सीलिंग फैन व ऊनी कपड़े उत्पादित करने के कार्य में लगी हुई हैं जिनकी माँग वर्ष की विशेष अवधि में ही होती है, उन्हें मौसम

तथा गैर–मौसम दोनों समयावधियों में कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होती है, क्योंकि उनके स्टाक में एक अच्छी मात्रा में बिना–बिका हुआ माल भी होता है जिसे वह अगले मौसम में बेच सकते हैं।

इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि वे फर्में जो टिकाऊ उपभोक्ता सामान बनाती है, जिनके निर्माण में अधिक समय लगता है अथवा उनके निर्माण में लम्बा मौसमी उतार–चढ़ाव होता है, उन्हें अधिक मात्रा में कार्यशील पूँजी की आवश्यकता पड़ती है। किन्तु रहतिया की उचित योजना एवं कुशल प्रबन्धन एवं उधारी वसूली की त्वरित प्रक्रिया से फर्म की कार्यशील पूँजी की मात्रा को काफी कम किया जा सकता है।

पाठगत प्रश्न 17.3

1. किन्हीं दो कारकों को बताइए जो स्थाई पूँजी की मात्रा को निर्धारित करते हैं।
2. निम्नलिखित अवस्थाओं में हमें 'अधिक' या 'कम' पूँजी की आवश्यकता होगी उल्लेख कीजिए।

   (क) एक कम्पनी जो लोहा व इस्पात का उत्पादन करती है।

   (ख) एक डबल रोटी बनाने वाली कम्पनी जिसका उच्च इन्वेन्ट्री आवर्त है।

   (ग) खिलौने बनाने का एक बहुत बड़े पैमाने का व्यावसायिक उद्यम।

   (घ) एक कम्पनी जो केवल ऑर्डर पर ही फर्नीचर तैयार करती है।

   (ङ) एक कम्पनी जो कूलर अथवा रेफ्रीजरेटर विनिर्माण का कार्य करती है।
3. सूची 'अ' की मदों का सूची 'ब' की मदों से मिलान कीजिए :

सूची 'अ'	सूची 'ब'
(क) स्थाई पूँजी	(i) अल्पकालीन वित्त
(ख) सार्वजनिक उपयोगिताएं	(ii) कार्यशील पूँजी की आवश्यकता
(ग) स्थाई कार्यशील पूँजी	(iii) दीर्घकालीन वित्त
(घ) ख्याति	(iv) टेलीफोन कम्पनी
(ङ) परिवर्तनशील कार्यशील पूँजी	(v) अप्रत्यक्ष स्थाई सम्पति
(च) उत्पादन चक्र की समयावधि	(vi) स्थाई कार्यशील पूँजी

टिप्पणी

17.4 पूँजी संरचना

एक फर्म की वित्तीय आवश्यकता **स्वामीगत** पूँजी और **ऋणगत** पूँजी से पूर्ण की जा सकती है। **स्वामीगत** पूँजी से तात्पर्य उस पूँजी से है जो व्यापार के स्वामी द्वारा लगाई जाती है। कम्पनी की अवस्था में यह कोष की उस रकम का द्योतक है जो अंशों को निर्गमित करके प्राप्त की जाती है। स्वामीगत पूँजी की मुख्य विशेषता यह है कि इसके अभिदाता ब्याज व कर के भुगतान के पश्चात् उपार्जित आय से लाभांश प्राप्त करने का अधिकार रखते हैं। अतः इस प्रकार की पूँजी पर प्रतिफल की दर उपार्जित लाभ की मात्रा पर निर्भर करती है और यदि फर्म कोई लाभ उपार्जित नहीं करती तो उन्हें कोई भी लाभांश प्राप्त नहीं होगा।

ऋणगत पूँजी से तात्पर्य पूँजी कोष की उस रकम से है जो दीर्घकालीन ऋण व ऋण–पत्रों द्वारा प्राप्त की जाती है और जिसके अभिदाता एक निश्चित दर से ब्याज पाने के अधिकारी होते हैं। चाहे फर्म को लाभ हो या न हो उन्हें ब्याज की रकम का वार्षिक अथवा अर्धवार्षिक अर्थात नियमित अन्तराल में भुगतान करना आवश्यक है। इस अवस्था में इस बात की भी बचनबद्धता होती है कि परिपक्वता तिथि पर मूल रकम का भुगतान कर दिया जाएगा। लेकिन व्यावसायिक प्रक्रिया में धन की व्यवस्था ऋणगत पूँजी से करना श्रेयस्कर होता है क्योंकि यदि नियोजित व्यापारिक निवेश से प्राप्त आय की मात्रा दी जाने वाली ब्याज की दर की मात्रा से अधिक होती है तो व्यापार के स्वामी को अधिक आय प्राप्त होती है। आइए, हम एक उदाहरण से इस अवधारणा को और स्पष्ट रूप से समझें।

पूँजी संरचना

	उदाहरण 'अ' कुल पूँजी 50 लाख रु. (20 लाख रु. स्वामीगत कोष + 30 लाख रु. ऋणगत कोष)	*उदाहरण 'ब' कुल पूँजी 50 लाख रु. (पूरा 50 लाख रुपया स्वामीगत कोष से प्राप्त + ऋणगत कोष कोई नहीं)*
ब्याज व कर अदा करने के पूर्व आय	10,00,000	10,00,000
ब्याज (ऋण पर 10% की दर से)	(–) 3,00,000	–
लाभ/आय, ब्याज के पश्चात् लेकिन कर से पूर्व	7,00,000	10,00,0000
कर (लाभ पर 40%)	(–) 2,80,000	(–) 4,00,000

टिप्पणी

कर भुगतान के बाद लाभ (PAT)	4,20,000	6,00,000
स्वामीगत कोष का लाभ = $\frac{(PAT) \times 100}{\text{स्वामीगत कोष}}$	$\frac{4,20,000}{20,00,000} \times 100 = 21\%$	$\frac{6,00,000}{50,00,000} \times 100 = 12\%$

मान लीजिए कि एक व्यवसाय में कुल विनियोग 50 लाख रु. है जिसमें स्वामी का अभिदान 20 लाख रुपया है और शेष रकम 30 लाख रुपया 10% वार्षिक ब्याज पर ऋण के रूप में ली गई है। यह मानते हुए कि ब्याज एवं कर देने के पूर्व अनुमानित आय 10 लाख रुपए है (कुल विनियोग का 20%) ब्याज का भुगतान करने के पश्चात् किन्तु कर अदा करने के पूर्व लाभ की रकम 7 लाख रुपए होगी (10 लाख रु.–3 लाख रु.)। आइए, हम मान लें कि लाभ पर कर भुगतान की दर 40% है। अतः कर अदा करने के पश्चात् लाभ 4.20 लाख रुपए का होगा (7 लाख रु.–2.80 लाख रु.) और स्वामीगत कोष का प्रतिफल 21% होगा। अब मान लीजिए कि आवश्यक विनियोग की कुल रकम, 50 लाख रुपया, व्यवसाय के स्वामी द्वारा दी जाती है और कोई भी ऋण नहीं लिया जाता। अतः इस स्थिति में कोई भी ब्याज देय नहीं होगा। इस पर कर की रकम 4 लाख रु. होगी (10 लाख का 40%)। अतः कर का भुगतान करने के पश्चात् लाभ की रकम 6 लाख रुपए होगी (10 लाख–4 लाख)। इस स्थिति में स्वामीगत कोष का लाभ 12% होगा। अतः आप देख सकते हैं कि यदि पूँजी का एक हिस्सा ऋण लेकर पूरा किया जाये तो व्यवसाय के स्वामी को प्राप्त होने वाला लाभ अपेक्षाकृत अधिक होगा। इसे **समता पर व्यापार** अथवा **उत्तोलक प्रभाव** (Leverage Effect) कहते हैं। किन्तु ऋण के रूप में वित्तीय कोष प्राप्त करने में जोखिम भी है क्योंकि लाभ के घटने पर और ब्याज की रकम निश्चित होने के कारण, व्यवसाय के स्वामी का प्रतिफल भी घट जाएगा। इसका तात्पर्य यह है कि ऋण पर निर्भरता एक उचित सीमा तक ही होनी चाहिए। अतः अधिकतर कम्पनियां अपने पूँजी कोष की संरचना स्वामीगत कोष व ऋणगत कोष के विवेकपूर्ण मिश्रण के आधार पर करती हैं। **एक कम्पनी द्वारा अपनी पूँजी की आवश्यकता पूर्ति के लिए समता एवं ऋण के मिश्रण का यथार्थ प्रयोग पूँजी संरचना के रूप में जाना जाता है।** एक कम्पनी की वित्तीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु समता व ऋण की संरचना से तात्पर्य दीर्घकालीन वित्त प्राप्त करने के स्रोत–समता अंश, पूर्वाधिकार अंश, ऋणपत्र एवं अन्य दीर्घकालीन कोषों के नियोजित मिश्रण से है। इस प्रकार पूँजी संरचना में निम्नलिखित दो आधारभूत निर्णय सम्मिलित हैं:

(क) निर्गमित की जाने वाली या वित्त प्राप्त करने वाली प्रतिभूतियों के प्रकार।

(ख) प्रत्येक प्रकार की प्रतिभूतियों में सापेक्षिक अनुपात।

टिप्पणी

17.4.1 पूँजी संरचना को निर्धारित करने वाले कारक

आप यह अध्ययन कर चुके हैं कि एक कम्पनी की पूँजी की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिए ऋण व समता का मिश्रण का प्रयोग (जिसे पूँजी संरचना कहते हैं) स्वामीगत पूँजी (अंशधारकों का कोष) का आय प्रतिफल की दर को प्रभावित करता है। इस प्रकार यह प्रति अंश का आय को निर्धारित करता है और कम्पनी के अंशों के बाजार मूल्य को भी प्रभावित करता है। अतः किसी कम्पनी के वित्त प्रबंधक के लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि वह एक उचित पूँजी संरचना हेतु महत्त्वपूर्ण निर्णय ले। इस प्रकार का निर्णय विश्वसनीय आंकड़ों और उनके सभी कारकों के सतर्क विश्लेषण के आधार पर लिया जा सकता है जो इस चयन को प्रभावित करते हैं। उचित पूँजी संरचना के अनुपात को निर्धारित करते समय निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखना आवश्यक है :

1. **संभावित आय व उसकी स्थिरता :** कम्पनी में निवेश किए जाने वाले धन से संभावित प्राप्त आय पर्याप्त ऊँची दर की है तो ऋण का प्रयोग करना उचित है। यही नहीं, बल्कि इस उद्देश्य से आय की स्थिरता को भी ध्यान में रखना आवश्यक है क्योंकि यदि एक फर्म ऐसे व्यावसायिक कार्य में लगी है जिसमें विक्रय एवं लाभ की मात्रा में काफी अस्थिरता है, तो ऋण का ऊँचे अनुपात में प्रयोग करना जोखिम पूर्ण होगा। दूसरे शब्दों में, यदि संभावित आय की उपलब्धता में अस्थिरता है तो समता अंश पूँजी का प्रयोग करना अधिक लाभप्रद होगा तथापि आय में वृद्धि की संभावना निश्चित होने पर उत्तोलक प्रभाव (लीवरेज एफेक्ट) से लाभ उठाने हेतु ऋण पर अधिक निर्भरता वांछनीय है।

2. **ऋण की लागत :** यदि निवेशित पूँजी पर संभावित आय की दर से संग्रहीत ऋण पर ब्याज की दर कम है तो कम्पनी के लिए ऋण पर निर्भर करना अधिक लाभप्रद है। जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कम लागत पर प्राप्त ऋण के द्वारा वित्तीयकरण की कुल लागत घट जाती है और समता पूँजी पर प्राप्त आय बढ़ जाती है।

3. **व्यवसाय के प्रबन्ध का अधिकार :** आप भलीभाँति जानते हैं कि ऋणपत्र धारक एवं पूर्वाधिकार अंश धारक को कम्पनी की प्रबन्ध व्यवस्था में भाग लेने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इस प्रकार का अधिकार केवल समता अंशधारियों को ही है, जिन्हें मताधिकार प्राप्त है। अतः समता एवं ऋण के अनुपात को निर्धारित करते समय कम्पनी के प्रर्वतकों एवं वर्तमान प्रबन्धकों को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि समता अंश के द्वारा पूँजी का निर्माण करने का व्यवसाय के नियंत्रण पर क्या प्रभाव पड़ेगा। अपने इन अधिकारों की सुरक्षा हेतु उनके लिए समता अंश के स्थान पर ऋणपत्र एवं पूर्वाधिकार अंशों से अतिरिक्त कोष प्राप्त करना श्रेयकर होता है।

4. **पूँजी बाजार की दशा :** पूँजी बाजार की दशा भी पूँजी संरचना के निर्णय को प्रभावित करती है। उस समय जबकि पूँजी बाजार में मन्दी का दौर चल रहा है और निवेशक अंशों में अपना धन नहीं लगाना चाहते हैं तब ऐसी स्थिति में ऋण पर निर्भर रहना अधिक अच्छा है या फिर जब तक कि बाजार की दशा अनुकूल नहीं हो जाती तब तक अंश द्वारा पूँजी जुटाने का निर्णय को टालना उचित रहेगा।

5. **नियामक मानदंड :** पूँजी संरचना के सम्बन्ध में निर्णय लेते समय वैधानिक प्रतिबन्ध, जैसे ऋण समता अनुपात की सीमा को ध्यान रखना आवश्यक है। वर्तमान समय में अधिकांश मामले में यह सीमा 2:1 है। यह नियम स्पष्ट करता है कि ऋण की मात्रा समता से दोगुने से अधिक नहीं होनी चाहिए। किन्तु आर्थिक वातावरण में परिवर्तन के साथ एक उद्योग से दूसरे उद्योग में यह सीमा परिवर्तित होती रहती है।

6. **लचीलापन :** नियोजित पूँजी संरचना इतनी लचीली होनी चाहिए कि बिना किसी कठिनाई के अतिरिक्त कोष एकत्रित किया जा सके। कम्पनी ऋण तथा समता के माध्यम से जब कभी आवश्यकता हो अतिरिक्त कोष जुटाने में समर्थ हो। किन्तु यदि कम्पनी की पूँजी संरचना में ऋण का बोझ बहुत अधिक हो जाता है तो ऋणदाता अतिरिक्त ऋण देने में असमर्थ हो सकते हैं। इस परिस्थिति में कम्पनी को अतिरिक्त कोष जुटाने के लिए केवल अंशों पर ही निर्भर होना पड़ सकता है जबकि पूँजी बाजार की स्थिति इसके लिए अनुकूल न हो। इसी प्रकार व्यवसाय की स्थिति खराब होने के कारण और विनियोजन के अन्य अवसर न होने के कारण वित्तीय कोषों को वापस करने की आवश्यकता हो सकती है। किन्तु यदि कम्पनी बहुत अधिकता से समता अंशों पर निर्भर करती है तो इस कार्य में कठिनाई हो सकती है क्योंकि अंशों का भुगतान सुगमता से करना संभव नहीं होगा। अतः इस कार्य में लचीलापन लाने के लिए यह अच्छा होगा कि फर्म शोधनीय प्रतिभूतियों पर अधिक निर्भर करे जिससे आवश्यकता होने पर भुगतान हो सके। इसके साथ ही कुछ ऐसे ऋण जुटाने की क्षमता का भी निर्माण हो जिससे भावी वित्तीय आवश्यकताओं को बिना किसी कठिनाई के पूरा किया जा सके।

7. **निवेश के प्रति विनियोजकों की अभिवृत्ति :** पूँजी संरचना का नियोजन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सभी निवेशक, निवेश के प्रति समान अभिवृत्ति नहीं रखते हैं। कुछ बहुत अधिक रूढ़िवादी होते हैं और वे अपने धन की वापसी की सुरक्षा चाहते हैं। ऐसे निवेशकों के लिए ऋणपत्रों में विनियोजन अधिक उपयुक्त है। इसके विपरीत कुछ निवेशक ऐसे भी हैं जो अपनी निवेशित राशि से अधिक से अधिक प्रतिफल प्राप्त करना चाहते हैं और निहित जोखिम को वहन करने को तैयार रहते हैं। ऐसे निवेशक समता अंश में अपना धन निवेशित करना

पसंद करते हैं। कुछ निवेशक ऐसे भी हैं जो सीमित मात्रा में जोखिम उठाना चाहते हैं यदि आय सुरक्षित ऋणपत्रों एवं बॉण्डों पर आय की अपेक्षा अधिक हो। इस श्रेणी के निवेशकों के लिए पूर्वाधिकार अंश अधिक उपयुक्त हैं। जब अधिक मात्रा में पूँजी की आवश्यकता हो तो उपरोक्त सभी प्रकार के निवेशकों को आकर्षित करने हेतु भिन्न–भिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों को निर्गमित करना चाहिए।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि उचित पूँजी संरचना उसे कहेंगे जिसमें–

(क) निहित जोखिम की उचित सीमा में रहकर उत्तोलक प्रभाव (लीवरेज एफेक्ट) का प्रयोग कर समता अंशों पर अधिकतम आय प्राप्त की जा सके।

(ख) विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों का न्यायोचित मिश्रण का प्रयोग कर सभी प्रकार के निवेशकों को आकर्षित किया जाय।

(ग) व्यावसायिक अवस्था में परिवर्तन के साथ वित्तीय कोष में वृद्धि अथवा कमी को करने हेतु पूँजी संरचना में लचीलापन लाया जा सके।

(घ) कम्पनी के मामलों में वर्तमान अंशधारियों के नियन्त्रण में कमी का जोखिम कम हो।

(ङ) वैधानिक प्रतिबन्ध एवं वर्तमान पूँजी बाजार की स्थिति का ध्यान रखा जाए।

उपरोक्त कथन के आधार पर संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि उचित पूँजी संरचना वह है जो वित्तीय कोष प्राप्त करने की लागत को कम कर सके और अंशधारकों को अधिकतम आय प्राप्त करा सके। वित्तीय व्यवस्था की शब्दावली में इस प्रकार की पूँजी संरचना को अनुकूलतम पूँजी संरचना कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 17.4

1. पूँजी संरचना में आप लचीलापन क्यों चाहते हैं?

2. निम्नलिखित में से कौन–से उचित पूँजी संरचना के लक्षण हैं? दिए हुए स्थान पर 'हाँ' या 'नहीं' लिख कर बताएँ। जहाँ पर आपका उत्तर 'नहीं' में है वहाँ अपने कथन को पुनः लिखें।

   (क) विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों का यह विवेकपूर्ण मिश्रण है। ( )

   (ख) इससे पुराने अंशधारियों का नियंत्रण कम होता है। ( )

   (ग) यह केवल धनवान निवेशकों को ही आकर्षित करता है। ( )

(घ) यह समता अंशों पर न्यूनतम आय सुनिश्चित करता है। ( )

(ङ) यह वैधानिक बाध्यता को ध्यान में रखता है। ( )

(च) इसमें रूढ़िवादिता एवं सुदृढ़ता होती है और इसमें समय के परिवर्तन के साथ परिवर्तन नहीं होता। ( )

17.5 लाभांश

आप इस बात को भली–भाँति जानते हैं कि प्रत्येक व्यावसायिक उपक्रम द्वारा वित्तीय वर्ष में प्राप्त लाभ अथवा हानि का निर्धारण किया जाता है एवं उसके स्वामियों में वितरित किया जाता है। एकल स्वामित्व वाले उपक्रमों की दशा में लाभ अथवा हानि की पूरी राशि को उनकी पूँजी में जोड़ दिया जाता है और जो कुछ रकम उनके द्वारा वर्ष में निकाली जाती है उसे आहरण कहते हैं। इस आहरण की रकम को पूँजी में से घटा दिया जाता है। इसी प्रकार साझेदारी की स्थिति में लाभ अथवा हानि को साझेदारों के मध्य उनके लाभ–हानि विभाजन के अनुपात में वितरित कर दिया जाता है और उनकी पूँजी में जोड़ दिया जाता है। जो कुछ भी रकम साझेदारों द्वारा वर्ष के मध्य में निकाली जाती है उसे उनकी पूँजी में से घटा दिया जाता है। कम्पनी की स्थिति में इस हेतु कुछ भिन्न तरीके का प्रयोग किया जाता है। सर्वप्रथम हम परिचालन लाभ की गणना करते हैं जिसे हम 'ब्याज व कर के पूर्व का लाभ' (PBIT) कहते हैं। बाद में हम ऋण के ब्याज को घटाते हैं और तब हम 'कर के पूर्व का लाभ' (PBT) ज्ञात कर पाते हैं। हम उक्त लाभ से सरकार द्वारा निर्धारित कर को घटाते हैं और कर अदा करने के पश्चात् का लाभ (PAT) ज्ञात करते हैं। यही लाभ की रकम अंशधारियों के मध्य वितरित करने हेतु उपलब्ध होती है। कम्पनी के द्वारा अर्जित किया हुआ सम्पूर्ण लाभ व्यवहार में वित्तीय बुद्धिमता का पालन करते हुए अंशधारियों को नहीं बांटा जाता। इस लाभ का पर्याप्त भाग कम्पनी की भावी वित्तीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए रोक लिया जाता है। इस प्रकार की रोकी गई आय को **संचित आय** (Retained Earning) कहते हैं और लाभ की जो रकम अंशधारियों में वितरित की जाती है उसे **लाभांश** कहते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि जो रकम पूर्वाधिकार अंशधारियों में वितरित की जाती है उसे **पूर्वाधिकार लाभांश** कहते हैं और जो लाभांश समता अंशधारियों में वितरित किया जाता है उसे **समता लाभांश** कहते हैं।

17.5.1 लाभांश के निर्णय को प्रभावित करने वाले कारक

पूर्वाधिकार अंशधारियों को प्राथमिकता के आधार पर एक निश्चित दर से लाभांश का भुगतान किया जाता है अर्थात् इनका भुगतान समता अंशधारियों के भुगतान के पूर्व किया जाता है। कम्पनी द्वारा समता अंशधरियों को भुगतान किए जाने वाले लाभांश का निर्णय, लाभांश संबंधी निर्णय का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। इस प्रकार के निर्णय निम्नलिखित कारकों से प्रभावित होते हैं :

1. **कम्पनी की वित्तीय आवश्यकता :** एक कम्पनी द्वारा वितरित किए जाने वाले लाभांश की रकम का निर्णय करते समय प्रबन्ध को व्यवसाय के सामान्य विकास के लिए वित्तीय आवश्यकताओं, विस्तारण प्रक्रिया, दीर्घकालीन ऋण के भुगतान, आदि को ध्यान में रखना चाहिए। वैसे भी कम्पनी को दीर्घकालीन ऋण शोधन क्षमता एवं आकस्मिक व्ययों के भुगतान हेतु लाभ का एक हिस्सा रोक लेना चाहिए।

2. **नकद कोष (Liquidity) की आवश्यकता :** लाभांश के भुगतान में रोकड़ का बाह्य प्रवाह होता है। एक समय ऐसी भी स्थिति हो सकती है कि एक कम्पनी को लाभ तो अधिक हुआ है लेकिन उसके पास नकद राशि कम हो। ऐसी परिस्थिति में वे लाभांश की ऊँची दर घोषित नहीं कर सकते। लाभांश की दर का निर्णय लेने के पूर्व सभी देय व्यय एवं ऋण के भुगतान हेतु नकद कोष की आवश्यकता को भी ध्यान में रखना चाहिए। विकासशील उपक्रम जिनके विस्तारण एवं कार्यशील पूँजी में वृद्धि की माँग के साथ अधिक नकद कोष की आवश्यकता होती है, उनके लाभांश निर्धारण में इस प्रकार की समस्या को ध्यान रखना आवश्यक है। ऐसी स्थिति में कम दर पर लाभांश घोषित करना श्रेयस्कर है।

3. **पूँजी बाजार में पहुंच :** एक कम्पनी अपने लाभदायकता के स्तर और समयानुसार ऋण भुगतान की क्षमता के कारण पूँजी बाजार में पहुंच की अच्छी क्षमता रखती है। यह पूँजी बाजार के द्वारा अंशों व ऋणपत्रों को निर्गमित करके सफलतापूर्वक वित्तकोष एकत्र कर सकती है और इस प्रकार वह उच्च दर पर लाभांश का भुगतान कर सकती है। किन्तु यदि एक कम्पनी अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति और निम्न लाभदायकता के स्तर के कारण पूँजी बाजार में पहुंच की कम क्षमता रखती है, तो वह उच्च दर पर लाभांश भी घोषित नहीं कर सकती है। यही नहीं, यदि पूँजी बाजार की अवस्था प्रतिकूल है तो अधिकांश कम्पनियां लाभांश घोषित करने में रूढ़िवादी नीति अपनाती हैं।

4. **अंशधारियों की अपेक्षाएँ :** समता अंशधारी ऊँचे दर पर लाभांश घोषित किए जाने की अपेक्षा अपनी पूँजी के मूल्य में वृद्धि चाहते हैं। किन्तु कुछ अंशधारी जैसे—अवकाश प्राप्त व्यक्ति अथवा कर्मचारी आय के नियमित स्रोत के रूप में लाभांश की मात्रा अधिक चाहते हैं। अपितु कम्पनियां अधिक लाभांश होने पर भी कम दर से अथवा न देकर इस वर्ग की उपेक्षा नहीं कर सकती। लाभांश का उचित भुगतान सर्वदा उत्तम माना जाता है। वास्तव में वे कम्पनियां जो बहुत अधिक या बहुत कम लाभांश घोषित करती हैं, उनकी पूँजी बाजार में निम्न श्रेणी में गिनती होती है और अंशधारी प्रबन्ध के इरादे पर संदेह करते हैं।

5. **कर नीति :** हमारे देश में लाभांश पर कर का भुगतान अंशधारियों द्वारा किया जाता है। अतः कम्पनी सामान्यत लाभांश के रूप में कम राशि घोषित करती है और अंशधारियों को समय–समय पर बोनस अंश घोषित करती रहती हैं क्योंकि बोनस अंश पर कर देय नहीं होते, जब तक उनका विक्रय नहीं किया जाता। यदि 12 माह के पश्चात् बोनस अंशों का विक्रय किया जाता है तो विक्रय राशि को दीर्घकालीन पूँजी लाभ माना जाता है और इस पर कम दर से कर देय होता है। अभी–अभी भारत सरकार ने लाभांश पर कर अदा करने की नीति में परिवर्तन कर दिया है। इस घोषणा के अनुसार अब अंशधारियों को प्राप्त लाभांश कर योग्य नहीं होता। अब कम्पनी को लाभ के वितरित किये गये भाग पर 12.5% का अतिरिक्त कर देना पड़ता है। अतः लाभांश वितरण के कार्य में कम्पनी बहुत उदार हो गई हैं।

6. **विनियोग के अवसर एवं विकास की संभावना :** जब एक कम्पनी के पास पर्याप्त लाभदायकता का अवसर एवं विकास की संभावना होती है तो वह अधिक लाभ रोक सकती है और कम लाभांश घोषित कर सकती है जिससे वह अंशधारियों की दीर्घकाल तक सेवा कर सके। किन्तु इस प्रकार की संभावना न होने पर कम्पनी ऊँची दर से लाभांश वितरित करना पसंद करती है और रोकड़ को निरुद्देश्य अपने पास रखने से बचती है।

7. **वैधानिक प्रतिबंधता :** कभी–कभी सरकार लाभांश घोषित करने की सीमा निर्धारित कर देती है। लाभांश के भुगतान करने का निश्चय करते समय इसका ध्यान रखना बहुत आवश्यक है। इसके साथ ही दीर्घकालीन कोष प्रदान करने वाले निवेशक अनुबन्ध के आधार पर लाभांश भुगतान पर कुछ प्रतिबन्ध लगा सकते हैं।

   कम्पनियों को इन सीमाओं का ध्यान रखना पड़ता है। फिर भी लाभांश के रूप में वितरित किए जानेवाली राशि का निश्चय करने हेतु कम्पनी अधिनियम ने कुछ नियम निर्धारित किये हैं। उदाहरण के लिए, पूँजीगत लाभ को लाभांश वितरण के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता। सामान्यतः एक बैंकिंग कम्पनी को अपने लाभ का कुछ प्रतिशत एक कानूनी संचय कोष में हस्तांतरित करना पड़ता है और उस राशि से लाभांश नहीं बांटा जा सकता है। लाभांश के रूप में वितरित की जाने वाली रकम को निर्धारित करते समय इन नियमों का पालन करना बहुत आवश्यक है।

पाठगत प्रश्न 17.5

1. किन्हीं पाँच कारकों को लिखिए जो लाभांश निर्धारण के निर्णय को प्रभावित करते हैं।

2. निम्नलिखित शब्दों का अर्थ दिए गए खाली स्थान में लिखिए :

(क) लाभांश (ख) संचित आय

(ग) पूर्वाधिकार लाभांश (घ) समता लाभांश

टिप्पणी

आपने क्या सीखा

- किसी व्यवसाय की सफलता के लिए पर्याप्त व उपयुक्त वित्तीयन बहुत महत्त्वपूर्ण है। वित्तीयन को संचालन करने वाली सपूर्ण प्रबन्धकीय प्रक्रिया को 'वित्तीय प्रबन्ध' कहते हैं। वित्त की वह प्रक्रिया जिसमें वित्तीय आवश्यकताओं का अनुमान, वित्तीयन के स्वरूप का निश्चय और वित्तीय नीतियों एवं विधि का निर्धारण किया जाता है उसे वित्तीय नियोजन कहते हैं। वित्तीय नियोजन के उद्देश्यों को प्रभावपूर्ण ढंग से प्राप्त करने हेतु यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि वित्तीय नियोजन की प्रक्रिया सरल है, दूरदर्शी है, व्यावसायिक संगठन की वित्तीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु उसमें आवश्यक लोच है, यथा संभव न्यूनतम लागत पर पर्याप्त धन प्रदान करता है और कम्पनी की नकदी की आवश्यकता को भी ध्यान में रखता है।

- एक व्यावसायिक उपक्रम की पूँजी की आवश्यकता को मुख्य रूप से स्थाई पूँजी व कार्यशील पूँजी के रूप में विभाजित किया जा सकता है। स्थाई पूँजी व्यवसाय के स्थाई व दीर्घकालीन आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाली पूँजी को प्रदर्शित करती है। इस प्रकार की आवश्यकता, व्यवसाय की प्रकृति, व्यवसाय के आकार, उत्पादन की वस्तु, उत्पाद के प्रकार, अपनाई गयी उत्पादन प्रक्रिया का स्वरूप, स्थाई सम्पत्ति प्राप्त करने की विधि जैसे—नकद भुगतान विधि, किश्त भुगतान विधि व पट्टा विधि, पर निर्भर करती है। स्थाई वित्त की आवश्यकता को दीर्घकालीन स्रोत के द्वारा पूरा किया जाता है।

- कार्यशील पूँजी से तात्पर्य उस कोष से है जिसकी आवश्यकता फर्म की चालू सम्पत्ति को क्रय करने हेतु होती है। कार्यशील पूँजी का एक भाग स्थाई स्वभाव का होता है जिसकी आवश्यकता को दीर्घकालीन वित्त के स्रोतों से पूरा किया जाता है। किन्तु कार्यशील पूँजी का एक बहुत बड़ा भाग स्वभाव से परिवर्तनशील होता है, जो समय—समय पर व्यवसाय के आकार के परिवर्तन के साथ परिवर्तित होता रहता है। कार्यशील पूँजी के इस भाग की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति अल्पकालीन स्रोतों जैसे अधिविकर्ष, आपूर्तिकर्त्ताओं द्वारा प्रदत्त साख, आदि होती है। इस प्रकार की पूँजी का निर्धारण, व्यवसाय की प्रकृति व्यवसाय का आकार, उत्पादन चक्र की समयावधि, इन्वेन्ट्री आवर्त दर, अपने ग्राहकों के लिए फर्म की साख नीति और मौसमी उतार—चढ़ाव से होता है।

- वित्तीय प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य अंशधारियों के धन को अधिकतम करना है।
- विनियोग सम्बन्धी निर्णय में यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि कौन सी सम्पत्तियाँ हैं, जिनमें कोष विनियोजित किया जाए।
- वित्तीय निर्णयन स्पष्ट करता है, स्वामीगत पूँजी एवं ऋण पूँजी अनुपात।
- लाभांश निर्णयन स्पष्ट करता है, अर्जित लाभ का कितना भाग अंशधारियों में लाभांश के रुप में वितरित किया जाए।
- वित्तीय नियोजन निधि की कमी व इसकी अधिकता की समस्या का समाधान करने में सहायक होता है। यह वित्त के प्रभावी उपयोग, समन्वय एवं नियंत्रण में भी सहायता करता है।
- वित्तीय नियोजन निर्धारित करता है कि कितना धन व्यय करना है और कैसे व्यय करना है।
- वित्तीय नियोजन एक सुदृढ़ पूँजी संरचना में सहायक होता है। प्रभावी वित्त के उपयोग, वित्त की आवश्यकता का अनुमान, वित्त के आधिक्य तथा वित्त की कमी से सम्बन्धित समस्या के समाधान आदि में सहायक होता है। विभिन्न विभागों से सम्बन्धित नीतियाँ बनाता है जिससे वित्तीय क्रियाओं पर नियंत्रण रखा जा सके।
- किसी फर्म की वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति स्वामित्व पूँजी एवं ऋणगत पूँजी द्वारा की जाती है। स्वामीगत वित्तीय कोषों पर उच्च आय प्राप्त करने हेतु सामान्य तौर पर फर्म ऋण व समता के एक विवेकपूर्ण मिश्रण का प्रयोग करती है। इस प्रकार के मिश्रण को फर्म की पूँजी संरचना कहते हैं। एक उचित पूँजी संरचना के चुनाव के लिए निर्धारित करने वाले कुछ कारक इस प्रकार हैं—(1) संभावित आय व उसकी स्थिरता, (2) ऋण की लागत, (3) नियंत्रण के अधिकार पर प्रभाव, (4) पूँजी बाजार, (5) पूँजी बाजार नियामक मानदण्ड, (6) लचीलापन और (7) निवेशकों की प्रवृति।
- लाभांश से तात्पर्य लाभ की उस रकम से है जो कम्पनी द्वारा अपने अंशधारियों में वितरित की जाती है। लाभ की वह रकम जो अंशधारियों में लाभांश के रूप में वितरित की जाये और वह जो भावी वित्तीय आवश्यकताओं के लिए रोकी जाये, इसका निर्णय उन कारकों जैसे—कम्पनी की भावी आवश्यकताएँ, नकद रोकड़ की आवश्यकता, कम्पनी की पूँजी बाजार में पहुँच, अंशधारियों की अपेक्षाएँ, कर नीति, विनियोजन के अवसर, विकास की संभावना व वैधानिक प्रतिबद्धता से होता है।

मुख्य शब्द

पूँजी संरचना	लाभांश–वित्त मिश्रण	स्थाई पूँजी
संचित आय	समता पर व्यापार	कार्यशील पूँजी
कार्यशील पूँजी चक्र		

पाठान्त प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लाभांश शब्द को परिभाषित कीजिए।
2. अनुकूलतम पूँजी संरचना से आप क्या समझते हैं?
3. वित्तीय प्रबन्ध का अर्थ बताइए।
4. वित्तीय नियोजन से क्या आशय है?

लघु उत्तरीय प्रश्न

5. वित्तीय नियोजन के चार उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
6. किन्हीं दो कारकों की व्याख्या कीजिए जिन्हें एक कम्पनी अपनी स्थायी पूँजी आवश्यकता का निर्धारण करते समय ध्यान में रखती है।
7. क्या आप इस बात की सलाह देते हैं कि एक कम्पनी द्वारा उपार्जित सभी लाभ उसे लाभांश के रूप में वितरित कर देना चाहिए? अपने उत्तर को कारण सहित स्पष्ट कीजिए।
8. पूँजी संरचना के किन्हीं दो निर्धारक तत्त्वों का वर्णन कीजिए।
9. समता पर व्यापार का क्या अर्थ है।
10. वित्तीय प्रबन्ध के उद्देश्यों का संक्षिप्त विवेचन कीजिए।
11. विनियोग निर्णयन से आप क्या समझते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

12. वित्तीय नियोजन का क्या अर्थ है? एक स्वस्थ वित्तीय नियोजन के लिये आवश्यक चार बातें बताइए।
13. ऋण द्वारा दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति अंशधारियों के कोष पर आय को किस प्रकार से प्रभावित करती है? उदाहरण के साथ स्पष्ट कीजिए।
14. 'लाभांश' का क्या अर्थ है? उन कारकों का उल्लेख कीजिए जो लाभांश के निर्णय को प्रभावित करते हैं।

15. आप एक व्यापारिक उपक्रम के लिए आवश्यक पूँजी की रकम का अनुमान किस प्रकार लगाएँगे? संक्षेप में वर्णन कीजिए।
16. वित्तीय प्रबन्ध में सम्मिलित निर्णयों का वर्णन कीजिए।
17. वित्तीय प्रबन्ध के महत्व का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

17.1 1. (अ) 2. (स) 3. (अ)

17.2 2. (ग) और (ङ)

3. (क) हाँ (ख) नहीं (ग) हाँ (घ) नहीं (ङ) हाँ

17.3 2. (क) अधिक (ख) कम (ग) अधिक (घ) कम (ङ) अधिक

3. (क) (iii) (ख) (iv) (ग) (vi) (घ) (v)
(ङ) (i) (च) (ii)

17.4 2. (क) हाँ
(ख) नहीं,—इनमें पुराने अंशधारियों द्वारा नियंत्रण के कम होने का न्यूनतम जोखिम रहता है।
(ग) नहीं, यह सभी प्रकार के निवेशकों को आकर्षित करता है।
(घ) नहीं, यह समता पर अधिकतम प्रतिफल सुनिश्चित करता है।
(ङ) हाँ
(च) नहीं (परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार कोष की मात्रा में कमी या वृद्धि वाले क्षमता के कारण इसमें आवश्यक लचीलापन है।)

17.5 1. (क) कम्पनी की वित्तीय आवश्यकता
(ख) तरलता, (ग) पूँजी बाजार में पहुंच,
(घ) कर नीति, (ङ) वैधानिक प्रतिबन्ध

2. (क) अंशधारियों को वितरित की जाने वाली लाभ की राशि
(ख) लाभ का वह भाग जिसे कम्पनी की भारी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु रोक लिया गया है।
(ग) लाभांश जो पूर्वाधिकार अंशधारियों को भुगतान किया गया।
(घ) लाभांश जो समता अंशधारियों को भुगतान किया गया।

टिप्पणी

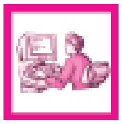

करें एवं सीखें

किन्हीं 10 वस्तुओं को जिन्हें देखते हैं अथवा प्रयोग करते हैं, चुनिये, जैसे चीनी, फर्नीचर, कूलर आदि। उन्हें सूचीबद्ध कीजिए और विश्लेषित कीजिए कि इनमें से प्रत्येक के उत्पादन के लिए अधिक कार्यशील पूँजी की आवश्यकता होगी अथवा कम की, और क्यों?

क्रम सं.	उत्पाद	अधिक/कम कार्यशील पूँजी	कारण
1.			
2.			
3.			
4.			
5.			
6.			
7.			
8.			
9.			
10.			

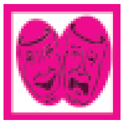

अभिनयन

श्री के. गांधी आल्टर लिमिटेड के निदेशक थे। जब वित्त प्रबंधक श्री आर. खन्ना ने कम्पनी का वित्तीय प्रतिवेदन उनके समक्ष प्रस्तुत किया तो वे बहुत चिंतित थे।

श्री गांधी : यह क्या है मि. खन्ना?

श्री खन्ना : महोदय, यदि ईमानदारी से कहा जाए तो यह फर्म की वास्तविक स्थिति है। आज के दिन हमारी फर्म अति पूँजीकृत है।

श्री गांधी : जब हमने चार वर्ष पूर्व इस कम्पनी को आरंभ किया था तो यह सामान्य व उचित पूँजीकृत थी।

श्री खन्ना : हो सकता है महोदय, किन्तु आज ऐसा नहीं है।

श्री गांधी : आप यह किस आधार पर कह रहे हैं?

श्री खन्ना : महोदय, प्रथम तो विनियोग पर हमारा प्रतिफल न्यायसंगत नहीं है।

श्री गांधी : आपके कहने का तात्पर्य क्या है।

श्री खन्ना : महोदय, इस उद्योग में अन्य फर्मों का सामान्य प्रतिफल 10% है जबकि हमारी फर्म का 8% है।

श्री गांधी : और कुछ?

श्री खन्ना और मि. गांधी ने अति पूँजीकरण के कारण, प्रभाव और समस्या के निवारण पर विचार–विमर्श किया।

आपको उपरोक्त वार्तालाप को स्वयं और अपने मित्र को पक्षकार बनाकर आगे बढ़ाना है।